International Journal of
Global Multidisciplinary Research and Analytics
IJGMRA | ISSN (Online): 3107-6483
July-September 2025 | Vol. 01 | Issue 2
Website: www.thearyapublication.com

भारतीय ज्ञान परंपरा एवं स्वदेशी ज्ञान: संथाल जनजाति की सांस्कृतिक प्रथाओं का अध्ययन

पिन्टू कुमार*

*शोधार्थी, शिक्षा विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा- 442001, महाराष्ट्र, भारत.
ई-मेल: pintu687095@gmail.com

DOI: http://doi.org/10.5281/zenodo.17314496
Accepted on: 28/09/2025 Published on: 10/10/2025

सारांश:

भारतीय ज्ञान परंपरा भारत की प्राचीन सभ्यता और सांस्कृतिक चेतना का प्रतीक है, जिसमें दार्शनिक, वैज्ञानिक, सामाजिक, आध्यात्मिक और लोक आधारित विविध ज्ञान धाराएँ समाहित हैं। इन धाराओं में जनजातीय ज्ञान प्रणाली एक अत्यंत महत्वपूर्ण किन्तु उपेक्षित अंग है, जो प्रकृति, समुदाय और सांस्कृतिक मूल्यों के साथ गहरे जुड़ाव पर आधारित है। यह शोध-पत्र विशेष रूप से संथाल जनजाति की पारंपरिक एवं देशज शिक्षा प्रणाली का विश्लेषण करता है, जिसमें अनुभवजन्य ज्ञान, मौखिक परंपरा, गीत-नृत्य, प्रकृति से जुड़ी शिक्षाएँ तथा सामूहिक निर्णय प्रणाली की महत्वपूर्ण भूमिका है। संथाल समुदाय की शिक्षा पद्धति बालकों में सामाजिक उत्तरदायित्व, नैतिकता, आत्मनिर्भरता एवं पर्यावरणीय चेतना का विकास करती है। यह अध्ययन दर्शाता है कि संथाल जनजाति की शिक्षा प्रणाली न केवल सतत विकास की दिशा में सहायक है, बल्कि भारतीय ज्ञान परंपरा को समृद्ध करने की अपार क्षमता भी रखती है। इस शोध का उद्देश्य संथाल देशज शिक्षा पद्धति को भारतीय शैक्षिक विमर्श में स्थान देना तथा इसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति के साथ समन्वित करने की आवश्यकता को रेखांकित करना है। यह शोध संथाल समुदाय की देशज ज्ञान प्रणाली और उसके भारतीय ज्ञान परंपरा में योगदान का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। शोध में संथालों के पारंपरिक कृषि ज्ञान, जल संरक्षण की विधियाँ, पारिस्थितिकीय चेतना, चिकित्सा पद्धतियाँ, सामाजिक संगठन, भित्तिचित्र कला, लोककथाएँ, और तंत्र-मंत्र जैसे सांस्कृतिक विश्वासों को शामिल किया गया है। साथ ही, सोहराय चित्रकला, बोंगा पूजा और लोक-परंपराओं के माध्यम से प्रकृति के साथ उनके सह अस्तित्व को भी दर्शाया गया है। यह अध्ययन दर्शाता है कि संथालों की सांस्कृतिक एवं पारंपरिक प्रथाएँ न केवल उनकी पहचान हैं, बल्कि सतत विकास और पर्यावरणीय संतुलन के लिए उपयोगी भी हैं। अनुसंधान में यह भी स्पष्ट होता है कि उपनिवेशी प्रभावों और आधुनिकता के चलते इनके पारंपरिक ज्ञान को हाशिये पर धकेला गया है, जिससे इनके

सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन पर प्रभाव पड़ा है। यह अध्ययन देशज ज्ञान को पुनः मुख्यधारा में लाने और उसे शिक्षा एवं विकास नीतियों में शामिल करने की आवश्यकता पर बल देता है।

***मुख्य शब्द**: भारतीय ज्ञान परंपरा, स्वदेशी ज्ञान , सांस्कृतिक चिकित्सा, संथाल संस्कृति, ओल चिकी।*

प्रस्तावना:

भारतीय ज्ञान परंपरा भारत की सांस्कृतिक, दार्शनिक एवं बौद्धिक विरासत का समग्र स्वरूप प्रस्तुत करती है, जो शताब्दियों से लोक-परंपराओं, शास्त्रीय ज्ञान, पर्यावरणीय संतुलन, कला, शिल्प तथा अनुभवजन्य शिक्षा पद्धतियों के माध्यम से निरंतर विकसित होती रही है। परन्तु इस व्यापक परंपरा में जनजातीय ज्ञान प्रणाली का स्थान आज भी सर्वोत्तम स्थान पर है, जिसे औपचारिक शिक्षा व्यवस्था एवं नीति-निर्माण में अपेक्षित मान्यता प्राप्त नहीं हुई है। **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020** ने भारतीय ज्ञान परंपरा को शिक्षा के मुख्य धारा में समाहित करने का मार्ग प्रशस्त किया है, किंतु जनजातीय समुदायों की देशज शिक्षा प्रणालियाँ, विशेषतः संथाल जनजाति की पारंपरिक ज्ञान प्रणाली, अभी भी उपेक्षित हैं। संथाल समुदाय की शिक्षा पद्धति श्रुति परंपरा, लोकगीतों, कहावतों, नृत्य, कृषि, वन-संरक्षण, प्राकृतिक चिकित्सा, तथा सामुदायिक जीवन मूल्यों पर आधारित है, जो अनुभवजन्य एवं सामाजिक सहभागिता से संचालित होती है। यह शिक्षा प्रणाली केवल सूचना का हस्तांतरण नहीं, अपितु जीवन के साथ संवाद की प्रक्रिया है, जो प्रकृति, संस्कृति तथा समुदाय के बीच सामंजस्य स्थापित करती है। **दत्तनिरंजन नंदिकोलमठ एवं डॉ. अरुणा एस. हल्लिकेरी (2023)** द्वारा प्रस्तुत शोध में इस बात पर बल दिया गया है कि आदिवासी ज्ञान प्रणाली न केवल जैव-विविधता और पारिस्थितिकीय संरक्षण का स्रोत है, बल्कि यह समावेशी, टिकाऊ तथा सामूहिक ज्ञान दृष्टिकोण को भी दर्शाती है। इस शोध-पत्र का उद्देश्य संथाल जनजाति की देशज शिक्षा प्रणाली का गवेषणात्मक विश्लेषण करते हुए इसे भारतीय ज्ञान परंपरा के संदर्भ में स्थापित करना है, जिससे इस परंपरा की सामाजिक उपयोगिता, सांस्कृतिक प्रासंगिकता एवं शैक्षिक महत्व को मान्यता प्रदान की जा सके । यह अध्ययन पश्चिमी ज्ञान प्रतिमानों की आलोचना करते हुए यह प्रस्तावित करता है कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था में जनजातीय ज्ञान एवं दर्शन का एकीकृत समावेश समय की मांग है। यह केवल सांस्कृतिक पुनरुद्धार का प्रयास नहीं, बल्कि भारत को 'विश्वगुरु' बनाने की दिशा में एक आवश्यक कदम है ।

भारतीय ज्ञान परंपरा और जनजातीय ज्ञान: एक समग्र और जीवंत विरासत

भारतीय ज्ञान परंपरा एक ऐसी समग्र अवधारणा है जो केवल शास्त्रीय ग्रंथों, वेदों और दर्शन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह भारत की गहन और विविध सांस्कृतिक विरासत को भी समाहित करती है। यह परंपरा न केवल ब्राह्मणीय ग्रंथों की सीमाओं में बंधी है, बल्कि लोक-परंपराओं, अनुभवजन्य ज्ञान, और समाज के विविध वर्गों के जीवनदर्शन से भी पोषित होती है। भारतीय ज्ञान परंपरा भारतीय सभ्यता की विशिष्टता को कला, विज्ञान, चिकित्सा, कृषि, वास्तु, भाषा, और सामाजिक संरचना जैसे विविध क्षेत्रों में अभिव्यक्त करती है (**सेन , 2020**) । नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने इस समृद्ध परंपरा को शिक्षा प्रणाली में पुनः एकीकृत करने का प्रयास किया है, जिससे युवाओं को अपनी जड़ों से जोड़ते हुए वैश्विक प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार किया जा सके। हालांकि, इस दिशा में अभी भी कई आयाम ऐसे हैं जो अपेक्षित मान्यता और समावेश से वंचित हैं—विशेषतः जनजातीय समुदायों का देशज ज्ञान। जनजातीय ज्ञान प्रणाली वास्तव में भारतीय ज्ञान परंपरा का एक प्राचीन, समकालीन और जीवंत रूप है। यह प्रणाली उन समुदायों के अनुभवों पर आधारित है जो सदियों से प्रकृति के साथ सहअस्तित्व में जीवन जीते आ रहे हैं। संथाल, भील, टोडा, गोंड, मिज़ो जैसी अनेक जनजातियाँ मौखिक परंपराओं, सामूहिक स्मृति और पर्यावरणीय समझ के माध्यम से ज्ञान का संचरण करती रही हैं (**भट्टाचार्य, 2022**)। जनजातीय ज्ञान में पर्यावरणीय संरक्षण, प्राकृतिक चिकित्सा, पारंपरिक कृषि, जीविका कौशल और सामाजिक नैतिकता के समृद्ध सूत्र मौजूद हैं। यह ज्ञान न केवल आज भी वनवासी और ग्रामीण क्षेत्रों में जीवित है, बल्कि यह आधुनिक समय में सतत विकास और पारिस्थितिकी सन्तुलन के लिए भी प्रेरणादायक है। अतः यह आवश्यक है कि भारतीय ज्ञान परंपरा की पुनर्रचना के इस दौर में जनजातीय ज्ञान प्रणालियों को भी समान रूप से मान्यता दी जाए और उन्हें शिक्षा, अनुसंधान और नीति निर्माण में उचित स्थान मिले। इससे न केवल IKS का विस्तार होगा, बल्कि भारत की विविधता और समृद्ध सांस्कृतिक चेतना का वास्तविक प्रतिनिधित्व भी संभव हो सकेगा (**नायक, 2017**)।

भारतीय ज्ञान परंपरा और संथाल जनजाति की पारंपरिक औषधीय पद्धतियाँ

संथाल जनजाति भारत की प्रमुख जनजातियों में से एक है, जो पारंपरिक ज्ञान और जीवनशैली में समृद्ध है। भारतीय ज्ञान परंपरा का एक महत्वपूर्ण और जीवंत हिस्सा जनजातीय चिकित्सा पद्धतियाँ हैं, जो लोक अनुभव,

प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व, और सामुदायिक स्मृति पर आधारित हैं। पश्चिम बंगाल के बांकुरा जिले के संथाल समुदाय के बीच किए गए एक विस्तृत अध्ययन में यह पाया गया कि उनके स्वास्थ्य देखभाल के पारंपरिक तरीकों में मुख्य रूप से वनस्पति और कभी-कभी पशु आधारित उपचार शामिल हैं। संथाल समुदाय के लोग रोगों को केवल शारीरिक विकार नहीं, बल्कि आध्यात्मिक असंतुलन और बुरी शक्तियों का परिणाम मानते हैं। उनका मानना है कि ईश्वर और विभिन्न आत्माएं स्वास्थ्य पर प्रभाव डालती हैं। यद्यपि वे बीमारी के भौतिक कारणों को पहचानते हैं, परंतु वे यह भी मानते हैं कि बीमारी का मूल कारण अदृश्य शक्तियों में छिपा हो सकता है। इस संदर्भ में पारंपरिक वैद्य या ओझा का महत्वपूर्ण स्थान है, जो जड़ी-बूटियों, मंत्रों, और सांस्कृतिक अनुष्ठानों के माध्यम से उपचार करते हैं (**भट्टाचार्य, 2021**)। संथाल जनजाति द्वारा उपयोग की जाने वाली औषधीय वनस्पतियों की सूची में अदरक, हल्दी, नीम, गिलोय, तुलसी, आंवला, बबूल, बेल, अश्वत्थ आदि जैसे कई पौधे शामिल हैं, जिनका उपयोग बुखार, सर्दी-खांसी, जख्म, त्वचा रोग, पाचन समस्याओं, मधुमेह और अन्य सामान्य रोगों के उपचार में किया जाता है। उपचार की विधियाँ भी विशिष्ट होती हैं, जैसे जड़ों या पत्तियों को पीसकर लेप बनाना, रस निकालकर पीना, या पानी में उबालकर उसका सेवन करना। संथाल समुदाय की यह पारंपरिक औषधीय पद्धति भारतीय ज्ञान परंपरा की जीवंत अभिव्यक्ति है, जो आधुनिक चिकित्सा पद्धति की अनुपस्थिति में सुलभ, सस्ती और प्रभावी समाधान प्रदान करती है (**प्रभाकरन, 2021**)। यह भी देखा गया कि इन पारंपरिक पद्धतियों का उपयोग आज भी व्यापक रूप से किया जाता है, विशेषकर ग्रामीण और दुर्गम क्षेत्रों में, जहाँ आधुनिक चिकित्सा सेवाओं की पहुंच सीमित है। हालांकि, कुछ विशेष परिस्थितियों में जैसे गर्भपात, साँप के काटने, या जटिल बीमारियों में ये पद्धतियाँ सीमित साबित होती हैं, और लोग तब सरकारी या मिशनरी अस्पतालों का सहारा लेते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि संथाल जनजाति की पारंपरिक चिकित्सा पद्धति भारतीय ज्ञान परंपरा की अमूल्य धरोहर है, जिसे संरक्षित, शोधित और शिक्षण प्रणाली में समाहित किए जाने की आवश्यकता है। इससे न केवल लोक ज्ञान को मान्यता मिलेगी, बल्कि स्वास्थ्य सेवाओं के सशक्तिकरण में भी योगदान मिलेगा (**बैरागी, 2023**)।

तालिका-1: संथाल जनजाति द्वारा उपयोग किए गए औषधीय पौधे

क्रमांक	पौधे का नाम (स्थानीय/हिंदी)	वैज्ञानिक नाम	उपयोग (रोग/स्थिति)	उपयोग की विधि

1	अदरक (आदा)	*Zingiber officinale*	सर्दी, खाँसी, गला बैठना	चाय में उबालकर या नमक के साथ चाट कर सेवन
2	आम (आम)	*Mangifera indica*	सिरदर्द	जले हुए आम का गूदा पीसकर रस बनाकर सेवन
3	आँवला (आमलकी)	*Emblica officinalis*	बालों की समस्या, सिफलिस	बालों में रस लगाना या शहद के साथ सेवन
4	पीपल (अश्वत्थ)	*Ficus religiosa*	दस्त	पत्ते और छाल को पीसकर पानी के साथ सेवन
5	बबूल (बबला)	*Acacia nilotica*	त्वचा संक्रमण, सिफलिस	पत्तों का रस पीना या गोंद का लेप लगाना
6	तुलसी	*Ocimum sanctum*	त्वचा रोग, खाँसी, बुखार, कीड़े का काटना	पत्तों का लेप या रस का सेवन
7	हल्दी (हलुद)	*Curcuma longa*	त्वचा संक्रमण, पेट के कीड़े	जड़ का पेस्ट बनाकर बाहरी त्वचा में उपयोग और गोली बनाकर सेवन
8	गिलोय	*Tinospora cordifolia*	बुखार, रोग प्रतिरोधक क्षमता	डंठल उबालकर रस पीना
9	बेल	*Aegle marmelos*	पेचिश, अपच	जले बेल का गूदा पीसकर सेवन
10	लाजवंती (लज्जाबोती)	*Mimosa pudica*	मुँह के संक्रमण	पत्ते-पानी उबालकर कुल्ला करना

स्त्रोत: करुणामय (2023)

भारत की जनजातीय प्रणालियों में पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ: सांस्कृतिक चिकित्सा की जीवंत परंपरा

भारत, विविध भाषाओं, संस्कृतियों और समुदायों का एक समृद्ध संगम है, जहाँ सदियों से पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ जनजातीय जीवन का अभिन्न हिस्सा रही हैं। ये पद्धतियाँ केवल जड़ी-बूटियों या पशु-उत्पादों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि इनमें समाज की सांस्कृतिक व्याख्याएँ, लोक विश्वास, रीति-रिवाज़, अनुष्ठान, और मान्यताएँ भी समाहित हैं। ऐसी चिकित्सा पद्धतियाँ जनजातीय समाज के शरीर, मन और आत्मा के संतुलन को बनाए रखने में सहायक होती हैं, और इन्हें एथनो मेडिसिन (Ethno-medicine) के नाम से जाना जाता है

(**करुणामय, 2023**)। भारत के विभिन्न भागों में फैले जनजातीय समुदाय— जैसे आंध्र प्रदेश के पूर्वी घाटों के परेंगी-पोरजा, छत्तीसगढ़ के बैगा, ओडिशा के चुक्तिया-भुंजिया, मिज़ोरम के मिज़ो, और पश्चिमी घाट के महादेव कोली, ठाकर और कटकारी— अपनी भिन्न भिन्न पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों का पालन करते हैं। इन सभी समुदायों के पास प्रकृति और रोग के बीच संबंधों की अपनी-अपनी व्याख्याएँ हैं। इनके वैद्य या शामन पहाड़ी क्षेत्रों, घने जंगलों और दुर्गम इलाकों में रहते हैं, और मौखिक परंपरा के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी चिकित्सा ज्ञान का प्रसार करते हैं। जनजातीय चिकित्सा में वनस्पतियों और पशु उत्पादों का महत्वपूर्ण स्थान है। औषधीय पौधों के रस, पत्तियों, जड़ों और छालों का प्रयोग बुखार, ज्वर, त्वचा रोग, संक्रामक रोग, चोटें, और मानसिक विकारों जैसे अनेक रोगों के उपचार में किया जाता है। इनका उपयोग किसी विशेष अनुष्ठान या देवी-देवताओं की आराधना के साथ किया जाता है, जो इनके विश्वास तंत्र का हिस्सा है। शोध में यह भी पाया गया है कि जनजातीय समाज में स्वास्थ्य का अर्थ केवल शरीर की स्थिति नहीं, बल्कि मानसिक और सामाजिक संतुलन भी है। इसलिए इन समुदायों में रोग का उपचार केवल दवा से नहीं होता, बल्कि संगीत, नृत्य, पूजा, और सामाजिक सहयोग के माध्यम से रोगी की चेतना और जीवन ऊर्जा को पुनर्स्थापित किया जाता है। अनेक बार ये उपचार प्रक्रियाएँ जनसामान्य की दृष्टि में अलौकिक प्रतीत होती हैं, लेकिन जनजातीय अनुभवों में इनका वैज्ञानिक महत्व और सामाजिक प्रभाव गहरा होता है (**पूरना, 2014**)। जनजातीय चिकित्सा पद्धतियाँ यह दर्शाती हैं कि मनुष्य ने प्रकृति के रहस्यों को समझकर अपने अनुभव और सांस्कृतिक धरोहर के आधार पर चिकित्सा के रूपों को विकसित किया। ये प्रणालियाँ आज भी उन क्षेत्रों में उपयोगी और प्रभावी हैं, जहाँ आधुनिक चिकित्सा पद्धति नहीं पहुँच सकी है। इसके अलावा, पारंपरिक चिकित्सा आधुनिक विज्ञान को भी नई दिशा देने में सहायक सिद्ध हो सकती है यदि इसे वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझा और संरक्षित किया जाए। निष्कर्षतः, भारत की जनजातीय पारंपरिक चिकित्सा केवल उपचार की प्रक्रिया नहीं, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक विरासत है, जिसे संरक्षित करना समय की माँग है। यह न केवल भारत की जैव-विविधता और सांस्कृतिक विविधता को समृद्ध करती है, बल्कि स्वास्थ्य के एक वैकल्पिक, समावेशी और मानव-केंद्रित दृष्टिकोण को भी प्रस्तुत करती है (**करुणामय, 2023**)।

सोहराय भित्ति कला: संथाल संस्कृति, परंपरा और भारतीय ज्ञान परंपरा की एक दृश्यात्मक विरासत

भारत की जनजातीय कला परंपराएँ देश की सांस्कृतिक विविधता और जीवनशैली की गहराई को प्रतिबिंबित करती हैं। इन्हीं परंपराओं में से एक है संथाल जनजाति की पारंपरिक भित्ति चित्रकला – सोहराय कला, जो मुख्य रूप से झारखंड, बिहार, ओडिशा और पश्चिम बंगाल के संथाल समुदायों द्वारा उनके पारंपरिक फसल त्योहार सोहराय के अवसर पर बनाई जाती है। यह कला केवल एक सजावटी अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह भारतीय ज्ञान परंपरा का एक सशक्त स्वरूप है, जो कृषि, पशुपालन, प्रकृति के साथ सहजीवन, पारिवारिक मूल्य और सांस्कृतिक परंपराओं को एक साथ समाहित करती है। सोहराय त्योहार फसल के मौसम के अंत का प्रतीक है और इसमें पशुओं के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की जाती है, जिन्होंने पूरे वर्ष खेतों में मेहनत की। इस पर्व पर संथाल महिलाएँ अपने घरों की मिट्टी की दीवारों पर जटिल, जीवंत और रंग-बिरंगे चित्र बनाती हैं। यह परंपरा पीढ़ी दर पीढ़ी चलती आ रही है, जहाँ माताएँ अपनी बेटियों को इस कला की तकनीकें सिखाती हैं। पारंपरिक रूप से सोहराय कला में प्रयुक्त रंग प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होते थे — जैसे मिट्टी, चारकोल, पत्ते, और पौधों का रस। चित्र उंगलियों, कपड़े, लकड़ी की टहनी आदि से बनाए जाते थे। इनमें प्रमुख रूप से हाथी, घोड़े, मोर, गाय, और पौराणिक देवताओं जैसे पशु-पक्षी और प्रतीकात्मक चित्र बनाए जाते हैं, जो समाज की उर्वरता, पूर्वजों की विरासत, जीवन-मृत्यु चक्र, और ग्रामीण परिवेश को दर्शाते हैं। हालाँकि, आधुनिकीकरण, वैश्वीकरण और शहरीकरण के प्रभावों ने इस पारंपरिक कला को भी अछूता नहीं छोड़ा है। अब संथाल समुदाय की नई पीढ़ी अपने चित्रों में तीन-आयामी आकृतियाँ, आधुनिक रंग संयोजन और डिजिटल दुनिया से प्राप्त प्रेरणा को सम्मिलित कर रही है। प्राकृतिक रंगों की जगह अब सिंथेटिक पेंट्स का उपयोग हो रहा है, जो अधिक टिकाऊ और सरल होते हैं, परंतु इससे इस कला के पारंपरिक स्वरूप की मौलिकता प्रभावित हो रही है। हजारीबाग, गुमला, दामोदर घाटी और लातेहार जैसे क्षेत्रों में सोहराय कला की क्षेत्रीय विविधताएँ भी देखने को मिलती हैं । हजारीबाग में चित्रों में अक्सर गायों को दिखाया जाता है, जबकि गुमला में "ट्री ऑफ लाइफ" की आकृति प्रचलित है। दामोदर नदी के किनारे बसे गाँवों में जलीय जीवों के चित्र और लातेहार में पौराणिक आकृतियाँ प्रमुख हैं। यह विविधता भारतीय ज्ञान परंपरा की स्थानीय अनुकूलन क्षमता और प्राकृतिक परिवेश के साथ तालमेल को दर्शाती है। भले ही आधुनिकता ने इस कला में अनेक बदलाव ला दिए हों, लेकिन आज भी इसका मूल स्वरूप संथाल समाज की आध्यात्मिकता, प्रकृति प्रेम, सामाजिकता और सांस्कृतिक चेतना को उजागर

करता है। सोहराय भित्ति चित्रकला केवल दीवारों पर बनाए गए चित्र नहीं हैं, बल्कि वे संथाल समुदाय की आत्मा और भारतीय ज्ञान परंपरा के जीवित दस्तावेज हैं (**गोपे, 2017**)।

संथाल समुदाय का पारंपरिक पर्यावरण ज्ञान: एक सांस्कृतिक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण

भारत की जनजातीय संस्कृतियाँ पर्यावरण के साथ एक गहरे और संतुलित संबंध को दर्शाती हैं। विशेष रूप से संथाल समुदाय, जो पूर्वी भारत के झारखंड, पश्चिम बंगाल, बिहार और ओडिशा जैसे राज्यों में प्रमुख रूप से निवास करता है, उनके सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में प्राकृतिक पर्यावरण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। संथालों के जीवन की हर परत – उनके त्योहार, विश्वास, कृषि, वास्तुकला, औषधीय ज्ञान और परंपराएं – प्रकृति के साथ एक विशेष सामंजस्य बनाए रखती हैं। एथ्नोसाइंटिफिक ज्ञान को एक वैध पारिस्थितिक ज्ञान माना जाता है, जो वैज्ञानिक अनुसंधान से प्राप्त ज्ञान के समतुल्य होता है। चैंडलर (1994, पृ. 415) के अनुसार, "यह प्रक्रिया, जिसमें पारंपरिक तरीकों के माध्यम से वैज्ञानिक रूप से मान्य पारिस्थितिक ज्ञान प्राप्त किया जाता है, प्रोटोसाइंस (Protoscience) कहलाती है।" यह एथ्नोसाइंटिफिक अध्ययन इस बात की पड़ताल करता है कि किस प्रकार संथाल समुदाय पर्यावरण को केवल एक भौतिक संसाधन के रूप में नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक तत्व के रूप में देखता है। उनके लोकगीतों, मिथकों, अनुष्ठानों, और दैनिक व्यवहार में प्रकृति के विभिन्न तत्व जैसे पेड़, नदियाँ, पहाड़, पशु-पक्षी, और ऋतुएँ गहराई से समाहित हैं (**अग्निहोत्री, 2023**)। संथालों की पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ, जैसे झूम खेती, भूमि की उर्वरता और पारिस्थितिकी के संतुलन को ध्यान में रखते हुए अपनाई जाती हैं। उनके द्वारा उपयोग की जाने वाली वनस्पतियाँ और जड़ी-बूटियाँ केवल औषधीय दृष्टि से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक प्रतीकों के रूप में भी देखी जाती हैं। उदाहरण के लिए, महुआ वृक्ष न केवल आर्थिक और पोषण का स्रोत है, बल्कि यह धार्मिक अनुष्ठानों और लोककथाओं में भी स्थान रखता है। इस समुदाय की जीवनशैली यह दर्शाती है कि उनका ज्ञान तंत्र (Knowledge System) पूरी तरह से उनके पर्यावरणीय अनुभवों और पीढ़ी दर पीढ़ी संचरित लोक ज्ञान पर आधारित है। इस ज्ञान में वैज्ञानिक समझ, पर्यावरणीय स्थायित्व, और सांस्कृतिक मूल्य – तीनों का समावेश है। इसे ही आज एथ्नोसाइंस कहा जाता है – यानी किसी समुदाय का पारंपरिक और सांस्कृतिक रूप से निर्मित विज्ञान। आज जब वैश्वीकरण, शहरीकरण और आधुनिक विकास ने प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव बढ़ा दिया है, ऐसे में संथाल समुदाय जैसे पारंपरिक समाजों का यह दृष्टिकोण पर्यावरण-संरक्षण के लिए प्रेरणास्रोत बन सकता है। यह

अध्ययन इस बात पर बल देता है कि संथालों की सांस्कृतिक चेतना और पारंपरिक ज्ञान को न केवल संरक्षित किया जाना चाहिए, बल्कि उसे मुख्यधारा की नीति, शिक्षा और विकास योजनाओं में उचित स्थान मिलना चाहिए (**प्रियंका, & सेठी, 2023**) ।

ओल चिकी लिपि: संथाल पहचान और भारतीय ज्ञान परंपरा का आत्मबोध

भारतीय जनजातीय समाजों के इतिहास में संथाल समुदाय का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में जब जातिगत भेदभाव, अशिक्षा और औद्योगीकरण के कारण आदिवासी समाज अपनी पहचान और सांस्कृतिक मूल्यों से छिन्न-भिन्न हो रहा था, उस समय रघुनाथ मुर्मू ने एक सांस्कृतिक पुनर्जागरण की शुरुआत की। उन्होंने 1930 के दशक में एक नई लिपि — ओल चिकी — का आविष्कार किया, जिसने संथाली भाषा, साहित्य और शिक्षा को एक नया आयाम दिया (**सरदार, 2022**) । 1920 के दशक से ही संथाली शिक्षा का प्रसार शुरू हुआ था, लेकिन जातिवादी दृष्टिकोण के कारण आदिवासियों को "पिछड़ा" और "अशिक्षित" मानकर मुख्यधारा से अलग रखा गया। औद्योगिक विकास ने उनके भूमि अधिकारों को छीन लिया और उन्हें 'कुली मजदूर' के रूप में वर्गीकृत कर दिया। इसी दौर में संथाली क्षेत्रों को मिलाकर झारखंड राज्य की माँग उठी, और जैपाल सिंह जैसे नेताओं ने नेतृत्व किया। इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में, ओडिशा के मयूरभंज ज़िले के एक संथाल शिक्षक रघुनाथ मुर्मू ने ओल चिकी लिपि की रचना की। वे संथाली भाषा को अन्य भारतीय लिपियों में लिखे जाने से असंतुष्ट थे, क्योंकि यह भाषा की आत्मा को व्यक्त नहीं कर पाती थी **(नंदिकोलमठ, 2023**) ।

ओल चिकी एक सामान्य वर्णमाला नहीं, बल्कि एक दर्शन है, जिसमें हर अक्षर का आकार और अर्थ एक गहरे सांस्कृतिक अर्थ से जुड़ा है। ये अक्षर केवल ध्वनि नहीं दर्शाते, बल्कि प्रकृति, शरीर की गतिविधियों और मानव जीवन की दैनिक क्रियाओं को भी व्यक्त करते हैं — जैसे पहाड़, जल, पेड़, हल चलाना, काटना आदि। मुर्मू ने इस लिपि को ईश्वरीय प्रेरणा का परिणाम माना। एक कथा के अनुसार, वे एक चट्टान के समीप पहुंचे तो मरांग बुरू देवता ने उन्हें 'ज्योतिमय अक्षरों' का दर्शन कराया। इसके बाद उन्होंने एक पैंथर के साथ लौटते हुए एकांतवास में सप्ताह भर इस लिपि का प्रारूप तैयार किया। उनका मानना था कि यह लिपि संथाल संस्कृति की भूली हुई आत्मा को पुनः जागृत कर सकती है **(कैरीन, 2022)** । ओल चिकी केवल एक लिपि नहीं है, बल्कि यह संथाल आत्मबोध,

सांस्कृतिक पुनरुद्धार, और सामाजिक न्याय का प्रतीक है। रघुनाथ मुर्मू का यह योगदान भारतीय ज्ञान परंपरा में एक अनूठा अध्याय जोड़ता है, जहाँ भाषा, लिपि, संस्कृति और सामाजिक चेतना — सभी एक साथ गुँथे हुए हैं। आज यह लिपि न केवल संथाल पहचान की रक्षा कर रही है, बल्कि आधुनिक भारत में आदिवासी सशक्तिकरण का भी एक सशक्त माध्यम बन चुकी है।

संथाल समुदाय का देशज ज्ञान: सतत विकास की ओर एक सांस्कृतिक और पारिस्थितिक दृष्टिकोण

भारत के संथाल समुदाय ने सदियों से एक समृद्ध और व्यावहारिक देशज ज्ञान प्रणाली विकसित की है, जो प्रकृति की गहरी समझ और सतत जीवन शैली के सिद्धांतों पर आधारित है। यह ज्ञान न केवल उनकी सांस्कृतिक पहचान का मूल आधार है, बल्कि आज के वैश्विक पर्यावरण और सामाजिक संकटों के समाधान के लिए भी अत्यंत प्रासंगिक है। संथालों की कृषि प्रणाली मिश्रित खेती पर आधारित है, जिसमें वे धान, मक्का, बाजरा और सब्जियाँ उगाते हैं। उनकी खेती की पारंपरिक पद्धतियाँ — जैसे फसल चक्र, सहफसली खेती, और जैविक खादों का उपयोग — मिट्टी की उर्वरता बनाए रखते हुए अत्यधिक दोहन को रोकने का कार्य करती हैं। इसके साथ ही, वे देशज बीजों का संरक्षण करते हैं, जो जलवायु परिवर्तन के अनुकूल और लचीले होते हैं। पारिस्थितिकी और पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में भी संथालों की समझ अत्यंत गहन है (**दत्ता, 2024**)। उनके वन प्रबंधन, जल संरक्षण और जैव विविधता संरक्षण के पारंपरिक उपाय इस बात के साक्षी हैं कि उन्होंने प्रकृति को केवल संसाधन नहीं, बल्कि एक जीवंत सत्ता के रूप में देखा है। सारना या पवित्र वन क्षेत्र उनके धार्मिक विश्वासों का हिस्सा हैं, जो जैव विविधता के संरक्षण के साथ-साथ सामाजिक प्रतिबद्धता को भी दर्शाते हैं। संथाल समुदाय परंपरागत जल संरक्षण तकनीकों जैसे तालाब और कुओं का निर्माण करके जल संसाधनों का संतुलित उपयोग करता है (**बैरागी, 2023**)। सामाजिक संरचना और शासन व्यवस्था में संथालों की "मंजही परगना" प्रणाली स्थानीय स्वशासन का उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें निर्णय सामूहिक रूप से लिए जाते हैं। उनका समाज सहयोग, सामूहिक उत्तरदायित्व और लैंगिक समानता को बढ़ावा देता है, जिससे सामाजिक सद्भाव और न्याय सुनिश्चित होता है। स्वास्थ्य और उपचार प्रणाली में भी उनका ज्ञान विशेष उल्लेखनीय है। संथालों में "कुम्हार" जैसे परंपरागत वैद्य होते हैं, जो औषधीय पौधों और जड़ी-बूटियों से उपचार करते हैं। उनके उपचार प्रणाली में शारीरिक के साथ-साथ आध्यात्मिक संतुलन भी महत्वपूर्ण माना जाता है। आध्यात्मिकता संथाल संस्कृति का मूल तत्व है। वे प्रकृति में बसे देवी-देवताओं और आत्माओं की पूजा करते हैं, और उनके अनुष्ठान,

गीत व नृत्य पर्यावरण से उनके गहरे संबंध को व्यक्त करते हैं। यह दृष्टिकोण उन्हें प्रकृति के साथ सद्भावपूर्ण सह-अस्तित्व की भावना से जोड़ता है। भाषा, लोककथाएँ, संगीत, नृत्य और कला संथालों की सांस्कृतिक विरासत को न केवल जीवित रखते हैं, बल्कि यह ज्ञान की पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण का माध्यम भी हैं। उनकी मौखिक परंपराएँ ऐतिहासिक, सामाजिक और नैतिक मूल्यों को संप्रेषित करने का काम करती हैं। इन सभी घटकों का समावेश एक लचीले, समन्वयकारी और सतत जीवन प्रणाली में होता है, जो न केवल उनके समुदाय को टिकाऊ बनाता है, बल्कि व्यापक विकास के लिए एक वैकल्पिक मॉडल भी प्रस्तुत करता है (**सिंह, 2021**)।

सतत विकास में देशज ज्ञान की भूमिका:

सतत विकास का उद्देश्य वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों की सुरक्षा सुनिश्चित करना है। यह आर्थिक विकास, सामाजिक समावेश और पर्यावरण संरक्षण — इन तीन स्तंभों पर आधारित है। संथालों का देशज ज्ञान इन तीनों आयामों को संतुलित रूप से संबोधित करता है। संसाधन प्रबंधन, जैव विविधता संरक्षण, जलवायु अनुकूलन, और सांस्कृतिक निरंतरता के क्षेत्र में संथालों की पारंपरिक प्रथाएँ आधुनिक विज्ञान को भी नई दिशा प्रदान कर सकती हैं। उनका ज्ञान स्थानीय संदर्भों में विकसित हुआ है और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, पारिस्थितिक संतुलन और सामाजिक समरसता को बढ़ावा देता है। उनकी आध्यात्मिकता और नैतिक मूल्य, जैसे सम्मान, पारस्परिकता और ज़िम्मेदारी, सतत जीवनशैली के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। आधुनिक विकास मॉडल में यदि इन मूल्यों और ज्ञान प्रणालियों को सम्मिलित किया जाए, तो हम एक अधिक न्यायसंगत, पर्यावरणीय रूप से सुदृढ़ और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील विकास की ओर बढ़ सकते हैं (**चक्रवर्ती, 2012**)। संथाल समुदाय का देशज ज्ञान आज के समय में एक अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर के साथ-साथ सतत विकास की दिशा में एक सशक्त पथप्रदर्शक भी है। यह न केवल पर्यावरणीय संकटों से निपटने के लिए समाधान प्रस्तुत करता है, बल्कि सामाजिक न्याय, आर्थिक स्थिरता और सांस्कृतिक पुनरुत्थान की दिशा में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है।

संथाल लोककथाओं में जादू-टोना और तंत्र: भारतीय ज्ञान प्रणाली में सांस्कृतिक पहचान की पुनर्व्याख्या

संथाल लोककथाएँ उनकी सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन का अभिन्न अंग हैं, जो उनके दैनिक जीवन, कृषि, खानपान, धार्मिक विश्वासों, अंधविश्वासों, विवाह प्रणाली, त्योहारों, संगीत, नृत्य और शिकार जैसे पहलुओं को जीवंत रूप से प्रस्तुत करती हैं। इन कथाओं में प्रेम, ईर्ष्या, प्रतिशोध, बोंगा देवताओं की कृपा से प्राप्त होने वाला धन और नैतिकता की झलक मिलती है, जहाँ अच्छाई की जीत और बुराई का दंड सुनिश्चित होता है। इन कथाओं में जादू, मंत्र, ताबीज, प्राचीन गाथाएँ, और मानव-प्रकृति के संबंधों का अद्भुत संयोजन देखने को मिलता है, जिससे ये लोककथाएँ मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण से अत्यंत रोचक बनती हैं। संथाल समाज में जादू-टोना केवल अंधविश्वास नहीं बल्कि एक गहन सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विश्वास प्रणाली है। इसे कभी-कभी पारंपरिक उपचार, आध्यात्मिक संवाद, और आत्माओं से संपर्क के एक माध्यम के रूप में भी देखा जाता है। संथाल लोककथाओं में "द ओझा एंड द डाइन", "इनिशिएशन इनटू विचक्राफ्ट", "द टू विचेस", "द सिस्टर-इन-लॉ हू वाज़ अ विच" जैसी कहानियाँ दिखाती हैं कि कैसे टोना-टोटका और जादू समाज में रोगों को ठीक करने हेतु , सुरक्षा, या फिर निजी स्वार्थ व प्रतिशोध के लिए प्रयुक्त होते थे। इन कथाओं में यह स्पष्ट होता है कि जादू-टोना कभी पूजनीय, तो कभी घृणित क्रिया मानी जाती थी (**स्वैन, 2020**)। इन कथाओं में यह भी चित्रित किया गया है कि कैसे समाज जादू-टोना करने वाले व्यक्तियों, विशेषकर महिलाओं को दोषी मानकर सामाजिक बहिष्कार, हिंसा और मृत्यु दंड तक दे देता है। हालांकि कुछ मामलों में ओझा और वैद्य समाज में सम्मानित भी होते हैं, जो समाज की सेवा करते हैं। यह परंपरा एक जटिल सामाजिक संरचना को उजागर करती है जहाँ एक ही विश्वास प्रणाली को अलग-अलग संदर्भों में सम्मान और तिरस्कार दोनों प्राप्त होता है। इन लोककथाओं का विश्लेषण यह दर्शाता है कि कैसे औपनिवेशिक शासन ने इन सांस्कृतिक विश्वासों को "असभ्य" और "पिछड़ा" मानते हुए नकारात्मक दृष्टिकोण से देखा है। इससे लोकविश्वासों की छवि विकृत हुई और संथाल जैसे समुदायों की पारंपरिक ज्ञान प्रणालियाँ कमजोर पड़ीं। इस सन्दर्भ में रॉबर्ट जे.सी. यंग का कथन प्रासंगिक है, जो कहते हैं कि उपनिवेशवाद ने परंपरागत सामाजिक संरचनाओं के विरुद्ध हस्तक्षेपों को "औपनिवेशिक नारीवाद" का नाम दिया, जिससे महिलाओं पर पश्चिमी विचारों को थोपने का आरोप भी लगा। इस प्रकार, संथाल लोककथाओं में जादू और तंत्र की प्रस्तुति न केवल धार्मिक और सांस्कृतिक संदर्भों में महत्वपूर्ण है, बल्कि यह एक सामाजिक और राजनैतिक विमर्श का भी हिस्सा है। इन कथाओं का विश्लेषण हमें न केवल संथाल समाज की गहराई से समझ प्रदान करता है, बल्कि यह हमारी समझ को भी उपनिवेशी प्रभावों से मुक्त

करने में मदद करता है। यह अध्ययन भारतीय ज्ञान परंपरा को पुनर्स्थापित करने और सांस्कृतिक विविधता के महत्व को स्वीकार करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है **(दुबे, 2019)**।

बिहार के संथालों की देशज ज्ञान प्रणाली और भारतीय ज्ञान परंपरा:

भारत की विविधता भरी सांस्कृतिक संरचना में आदिवासी समुदायों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। इन समुदायों की जीवन शैली, परंपराएँ और ज्ञान प्रणालियाँ भारतीय ज्ञान परंपरा का एक अभिन्न अंग हैं। बिहार के संथाल समुदाय की देशज ज्ञान प्रणाली न केवल उनके सांस्कृतिक अस्तित्व की पहचान है, बल्कि यह प्राकृतिक संसाधनों, पारिस्थितिकी, कृषि, चिकित्सा, और सामाजिक संरचना से गहरे रूप से जुड़ी हुई है। बिहार के संथाल पारंपरिक कृषि प्रणाली में विशेषज्ञ होते हैं (**नागरे, 2022**)। वे मिश्रित फसलों की खेती करते हैं जिसमें धान, मक्का, बाजरा और सब्जियाँ शामिल हैं। वे फसल चक्र, अंतरवर्ती खेती और जैविक खाद का उपयोग करते हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है और पर्यावरण संतुलित रहता है। उनके पास पारंपरिक बीजों का भंडार है, जो जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध सहनशील होते हैं। इसके अलावा, संथाल समुदाय जल संरक्षण की परंपरागत विधियाँ अपनाते हैं—जैसे तालाब और कुएँ निर्माण। उनका वन प्रबंधन ज्ञान भी उल्लेखनीय है, जहाँ "पवित्र उपवन" को जैव विविधता संरक्षण हेतु संरक्षित किया जाता है **(बिस्वास, 2016)**।

बिहार के संथाल समुदाय के पास औषधीय पौधों और जड़ी-बूटियों का गहरा ज्ञान है। वे विभिन्न बीमारियों के उपचार हेतु पेड़-पौधों की छाल, पत्तियाँ, और जड़ें प्रयोग करते हैं। 'कुंभार' नामक परंपरागत वैद्य समुदाय में सम्मिलित होते हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी यह ज्ञान संप्रेषित करते हैं। यह चिकित्सा प्रणाली केवल भौतिक उपचार तक सीमित नहीं है, बल्कि आध्यात्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों से भी जुड़ी होती है, जिसमें ओझा या ओझाइन द्वारा अनुष्ठान, मंत्र और बलि का प्रयोग किया जाता है (**मंडल, 2020**)। संथालों की सामाजिक व्यवस्था कबीलाई होती है, जिसे "माझी परगना" प्रणाली के माध्यम से संचालित किया जाता है। इसमें सामूहिक निर्णय, सामुदायिक न्याय और सामाजिक उत्तरदायित्व की स्पष्ट व्यवस्था है। धार्मिक रूप से ये लोग बोंगा (आत्मा) पूजा में विश्वास रखते हैं और प्रकृति को ईश्वरतुल्य मानते हैं। संथालों के पर्व-त्योहार, जैसे सोहराय (फसल पर्व) और बाहा (फूल पूजा), प्रकृति और जीवन के बीच संतुलन को दर्शाते हैं (**कैरीन, 2022**)।

संथाल लोककथाएँ, गीत, नृत्य और सोहराय भित्ति चित्र उनकी सांस्कृतिक विरासत को समृद्ध करते हैं। इन माध्यमों से वे सामाजिक नैतिकता, पर्यावरणीय चेतना और ऐतिहासिक घटनाओं को अगली पीढ़ी तक पहुँचाते हैं। उदाहरणस्वरूप, सोहराय चित्रकला में प्राकृतिक रंगों और प्रतीकों के माध्यम से मानव और पशु के सह-अस्तित्व को दर्शाया जाता है। संथालों की पारंपरिक ज्ञान प्रणाली भारतीय ज्ञान परंपरा का जीवंत और व्यावहारिक पक्ष है। यह ज्ञान वैज्ञानिक, नैतिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से समृद्ध है, जो आधुनिक शिक्षा और विकास में सहायक हो सकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने इस बात पर बल दिया है कि देशज ज्ञान को मुख्यधारा की शिक्षा में सम्मिलित किया जाए। ऐसे में संथाल समुदाय की पारंपरिक प्रणालियाँ स्थायी विकास और पर्यावरणीय संतुलन के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। बिहार के संथालों की देशज ज्ञान प्रणाली न केवल उनके सांस्कृतिक अस्तित्व की पहचान है, बल्कि यह भारतीय ज्ञान परंपरा की भी अमूल्य धरोहर है। आधुनिक विकास के संदर्भ में इस ज्ञान को मान्यता देना और संरक्षित करना समय की आवश्यकता है। यह केवल आदिवासी समुदायों को सशक्त करने का नहीं, बल्कि भारत की समग्र ज्ञान परंपरा को सुदृढ़ करने का माध्यम भी है (**दास, 2023**)।

निष्कर्ष:

इस शोध से स्पष्ट होता है कि संथाल जनजाति की देशज शिक्षा प्रणाली केवल एक परंपरा नहीं, बल्कि एक जीवन शैली है, जो सामुदायिकता, प्रकृति-संरक्षण और नैतिक जीवन मूल्यों पर आधारित है। यह प्रणाली अनुभव आधारित, सांस्कृतिक रूप से समृद्ध, और पर्यावरणीय दृष्टि से उत्तरदायी है। आधुनिक औपचारिक शिक्षा जहाँ सूचना आधारित है, वहीं संथाल समाज की पारंपरिक शिक्षा ज्ञान, अनुभव और व्यवहार पर केंद्रित है। शोध का निष्कर्ष यह है कि संथाल समुदाय की देशज ज्ञान प्रणाली भारतीय ज्ञान परंपरा की एक जीवंत, सजीव और व्यवहारिक इकाई है, जो आज के वैश्विक और पर्यावरणीय संकटों में एक वैकल्पिक समाधान प्रदान कर सकती है। यह ज्ञान प्रणाली केवल सांस्कृतिक विरासत नहीं है, बल्कि एक समग्र जीवनदृष्टि है, जिसमें प्रकृति, समाज और अध्यात्म के बीच संतुलन बना रहता है। चाहे वह संथालों की कृषि पद्धति हो, पारंपरिक चिकित्सा हो, या फिर सोहराय जैसे त्यौहारों में प्रकृति की पूजा—हर पहलू उनके ज्ञान और जीवनशैली की पर्यावरणीय एवं नैतिक समझ को दर्शाता है। साथ ही, जादू-टोना और तंत्र से जुड़ी लोककथाएँ उनके सामाजिक न्याय, नैतिकता और धार्मिक विश्वासों को प्रतिबिंबित करती हैं। वर्तमान समय में जब शिक्षा व्यवस्था में स्थानीयता, बहुलता और समावेशन की आवश्यकता को स्वीकार

किया जा रहा है, तब ऐसी जनजातीय ज्ञान प्रणालियों को न केवल दस्तावेजीकृत किया जाना चाहिए, बल्कि उन्हें भारतीय ज्ञान परंपरा के औपचारिक ढांचे में समाहित कर, शिक्षा नीति का अभिन्न अंग बनाया जाना चाहिए। संथाल शिक्षा प्रणाली के माध्यम से हम ऐसी शिक्षा की कल्पना कर सकते हैं जो विद्यार्थियों में सांस्कृतिक गर्व, प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व, और सामाजिक सहभागिता का बोध कराए। अतः यह अत्यंत आवश्यक है कि नीति-निर्माता, शिक्षाविद एवं शोधकर्ता मिलकर इस ज्ञान को संरक्षित करें, उसका प्रचार-प्रसार करें तथा अगली पीढ़ियों तक इसके मूल्यों को हस्तांतरित करें।

संदर्भ:

1. ऐच, एस. (2024). एथनिक ट्रैडिशनल हीलिंग प्रैक्टिसेज़ इन द ट्राइबल सिस्टम्स ऑफ़ इंडिया. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ ह्यूमैनिटीज़ सोशल साइंस एंड मैनेजमेंट (आईजेएचएसएसएम)*, 4(5), 320–324. https://ijhssm.org/issue_dcp/Ethnic%20Traditional%20Healing%20Practices%20in%20the%20Tribal%20Systems%20of%20India.pdf
2. बी., सिंह, एच., & अग्निहोत्री, पी. (2013). रोल ऑफ ट्रेडिशनल नॉलेज इन कंज़र्विंग बायोडायवर्सिटी: अ केस स्टडी फ्रॉम पाटल. *जर्नल ऑफ बायोडायवर्सिटी मैनेजमेंट एंड फॉरेस्ट्री*. https://scitechnol.com/2327-4417/2327-4417-2-108.pdf
3. बैरागी, एन., & सेल्वाधस, ए. (2023). डिज़ाइन नॉलेज इन प्रैक्टिस: एन एथ्नोग्राफिक स्टडी विद संथाल एंड मोहली ट्राइबल आर्टिज़न्स ऑफ डुम्का, इंडिया. *स्प्रिंगर ई-बुक्स* (पृ.155–169). https://doi.org/10.1007/978-981-99-0264-4
4. बैरागी, एन., सेल्वधास, ए., & आचार्य, एस. (2023). इनोवेटिव कोलैबोरेशन एंड को-डिज़ाइनिंग विद संथाल एंड मोहली ट्राइब्स ऑफ दुमका, इंडिया. *दि इंटरनेशनल एसोसिएशन फॉर सोसाइटीज़ ऑफ डिज़ाइन रिसर्च कॉन्फ्रेंस 2023, हेल्ड एट द पॉलिटेक्निको मिलानो, मिलान, इटली*, (9–13 अक्टूबर, मिलान, इटली). https://doi.org/10.21606/iasdr.2023.487
5. भट्टाचार्य, एस. (2022). इंडिजिनस नॉलेज एंड एथ्नो-मेडिसिन ऐज़ एन इफेक्टिव सोर्स ऑफ ट्रीटमेंट: अ स्टडी ऑन द कार्बिस ऑफ कार्बी आंगलॉन्ग, *ए स्टडीज़ ऑन एथ्नो-मेडिसिन*, 16(3–4). https://doi.org/10.31901/24566772.2022/16.3-4.655
6. भुयान, डी. डी. (2017). द रोल ऑफ ट्रेडिशनल नॉलेज अमंग एथनिक कम्युनिटी स्पेशली ताई-अहोम पीपल ऑफ अपर असम. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ फॉना एंड बायोलॉजिकल स्टडीज*, 4(2), 117–119. http://www.faunajournal.com/archives/2017/vol4issue2/PartB/4-2-15-276.pdf
7. चक्रवर्ती, एफ. (2012). हेल्थ मेंटेनिंग एंड डिज़ीज क्युरेटिव एथ्नो-मेडिसिनल एंड रिलीजियस प्रैक्टिसेज बाय द संथाल्स ऑफ केओंझार डिस्ट्रिक्ट, ओरिसा. *आईओएसआर जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड सोशल साइंस*, 2(5), 35–45 https://doi.org/10.9790/0837-0253545

8. चेन, एक्स. (2023). एन एक्सपांडेड हेल्थ सिस्टम्स परस्पेक्टिव ऑन ट्राइबल हेल्थ नॉलेज एंड प्रैक्टिसेज: कंटेम्परेरी रेलिवेंस एंड चैलेंजेस. *पीपल, कल्चर्स एंड सोसायटीज़*, 325–346. https://doi.org/10.1007/978-981-19-4286-0
9. दत्ता, बी., गंताई, एस., हांसदा, एस., & दास, ए. के. (2024). डॉक्युमेंटेशन ऑफ इंडिजिनस मेडिसिनल नॉलेज ऑफ सिलेक्ट ट्राइबल कम्युनिटीज ऑफ वेस्ट बंगाल. *जर्नल ऑफ डाटा साइंस, इन्फ़ोर्मेट्रिक्स एंड साइटेशन स्टडीज़*, 3(3), 349–355. https://doi.org/10.5530/jcitation.3.3.34
10. दास, ए., & राय, आर. (2023). सोहराय वॉल आर्ट ऑफ द संथाल्स: ए विज़ुअल क्रॉनिकल ऑफ कल्चर एंड ट्रैडिशन इन द इंडियन नॉलेज सिस्टम. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ क्रिएटिव रिसर्च थॉट्स*. रिट्रीव्ड फ्रॉम https://www.ijcrt.org/
11. दुबे, सी. एस. (2019). विचक्राफ्ट एंड मैजिक इन संथाली फोल्कटेल्स: अ पोस्ट-कोलोनियल स्टडी. *ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस*.
12. गोपे, एल., बेहरा, एस. के., & रॉय, आर. (2017). आइडेंटिफिकेशन ऑफ इंडिजिनस नॉलेज कंपोनेंट्स फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट अमंग द संथाल कम्युनिटी. *अमेरिकन जर्नल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च*, 5(8), 887–893. https://doi.org/10.12691/EDUCATION-5-8-8
13. करुणामय, प्रियंका, & सेठी, रश्मिरेखा (2023). ट्राइबल इंडिजिनस नॉलेज ऑफ मेडिसिन फॉर सस्टेनेबल डिवेलपमेंट: एन एक्सप्लोरेटरी स्टडी. *द इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन साइकोलॉजी*, 11(4), आर्टिकल 245. https://doi.org/10.25215/1104.245
14. कुमार, के. एस. वी. (2022). ट्राइबल कल्चर, ट्रेडिशनल नॉलेज और फॉरेस्ट मैनेजमेंट इन इंडिया: एन एनवायरन्मेंटल जस्टिस पर्सपेक्टिव ऑन फॉरेस्ट राइट्स एक्ट. *द इंडियन फॉरेस्टर*, 148(11), 1121. https://doi.org/10.36808/if/2022/v148i11/165209
15. कुर्मी, ए., कौशिक, एस. के., पाण्डेय, एस. के., नागरे, एस. के., श्वेता, एस., & थोमस, एम. (2022). ट्रेडिशनल नॉलेज-बेस्ड एग्रीकल्चरल प्रैक्टिसेज इन ट्राइबल डॉमिनेटेड डिस्ट्रिक्ट अनुप्पुर, मध्य प्रदेश. *प्लांट साइंस टुडे*. https://doi.org/10.14719/pst.1882
16. कैरीन, एम. (2022). संथाल इंडिजिनस नॉलेज, कल्चरल हेरिटेज, एंड द पॉलिटिक्स ऑफ रिप्रजेंटेशन. *मॉडर्न एशियन स्टडीज़*, 56(4), 1438–1463. https://doi.org/10.1017/S0026749X2100024X
17. मंडल, ए., अधिकारी, टी., चक्रवर्ती, डी., रॉय, पी., साहा, जे., बर्मन, ए., & साहा, पी. (2020). एथ्नो-मेडिसिनल यूज़ेस ऑफ प्लांट्स बाय संथाल ट्राइब ऑफ अलीपुरद्वार डिस्ट्रिक्ट, वेस्ट बंगाल, इंडिया. *इंडियन जर्नल ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी*, 13(20), 2020–2035. https://doi.org/10.17485/IJST/V13I20.565
18. नायक, के., & नाइक, डी. (2017). इंडिजिनस नॉलेज एंड हेल्थ केयर प्रैक्टिसेज अमंग द सांतल कम्युनिटीज़: अ केस स्टडी ऑफ मयूरभंज डिस्ट्रिक्ट ऑफ ओडिशा. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ह्यूमैनिटीज एंड सोशल साइंस रिसर्च*, 3(3), 5–9. https://www.socialsciencejournal.in/
19. नंदिकोलमठ, डी., & हल्लिकेरी, ए. एस. (2023**).** दि एसेंस ऑफ़ द ट्राइबल नॉलेज सिस्टम इन द इंडियन नॉलेज सिस्टम. *शोध दृष्टि: एन इंटरनेशनल पीयर रिव्यूड रिफ़रीड रिसर्च जर्नल*, 14(5), 31–34. https://www.researchgate.net/publication/371686378

20. ओक, ई. (2025). एक्सप्लोरिंग इंडिजिनस नॉलेज कंपोनेंट्स फॉर प्रमोटिंग सस्टेनेबल डिवेलपमेंट इन द संथाल कम्युनिटी, *बॉस्टन रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल साइंसेज़ एंड ह्यूमैनिटीज*, रिट्रीव्ड फ्रॉम https://www.researchgate.net/profile/Emmanuel-Ok-2/publication/388120184_Exploring_Indigenous_Knowledge_Components_for_Promoting_Sustainable_Development_in_the_Santhal_Community/links/678af6171ec9f9589f4ac0d3/Exploring-Indigenous-Knowledge-Components-for-Promoting-Sustainable-Development-in-the-Santhal-Community.pdf
21. पूरना, आर. एल., माइमून, एम., & हरिहरन, ए. (2014). प्रिज़र्वेशन एंड प्रोटेक्शन ऑफ ट्रेडिशनल नॉलेज – डाइवर्स डॉक्युमेंटेशन इनिशिएटिव्स अक्रॉस द ग्लोब. *करंट साइंस*, 107(8), 1240–1246. https://doi.org/10.18520/CS/V107/I8/1240-1246
22. प्रभाकरन, आर., & कुमार, टी. एस. (2021). एथ्नोमेडिसिनल नॉलेज अमंग द मलायाली ट्राइबल ऑफ चिट्टेरी हिल्स, ईस्टर्न घाट्स, तमिल नाडु, इंडिया. *करंट बॉटनी*, 28–35. https://doi.org/10.25081/CB.2021.V12.6878
23. सरदार, आर., & गिरी, एन. (2022). इंडिजिनस नॉलेज ऑफ ट्राइबल ट्रेडिशनल मेडिसिनल प्लांट्स: एन एक्सपेरिमेंटल रिसर्च. *बायोसाइंसेज़, बायोटेक्नोलॉजी रिसर्च एशिया*, 19(2), 451–457. https://doi.org/10.13005/bbra/2999
24. सिकंदर, एस., & बिस्वास, एस. (2016). इंडिजिनस हेल्थ केयर प्रैक्टिसेज अमंग संथाल्स ऑफ बांकुरा, वेस्ट बंगाल, इंडिया. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ पब्लिक हेल्थ रिसर्च एंड मैनेजमेंट*, 3(1), 1–24. रिट्रीव्ड फ्रॉम https://www.academia.edu/34335715/Indigenous
25. सेन, यू. के., & भकत, आर. के. (2020). रोल ऑफ ट्रेडिशनल एथ्नोबॉटैनिकल नॉलेज: कल्चर एंड इंडिजिनस इंस्टिट्यूशन्स इन मेडिसिनल प्लांट कंज़र्वेशन (पृ. 58–80). *आई. जी. आई. ग्लोबल*. . https://doi.org/10.4018/978-1-7998-1320-0.CH004
26. सिंह, सी., & बॉन्ड्या, एस. (2021). बायोडायवर्सिटी कंज़र्वेशन थ्रू इंटेग्रेशन ऑफ ट्रेडिशनल एथनिक प्रैक्टिसेज ऑफ संथाल ट्राइब इन झारखंड, इंडिया. *इंडियन जर्नल ऑफ फॉरेस्ट्री*. https://doi.org/10.54207/bsmps1000-2021-f23nzu
27. स्वैन, एस., भट्टाचार्य, एस., & चक्रवर्ती, एस. (2020). एथ्नो-वेटरनरी प्रैक्टिस फॉलोड बाय संथाल ट्राइब्स टू ट्रीट फुट एंड माउथ डिज़ीज़ेज़ ऑफ लाइवस्टॉक इन घाटशिला ब्लॉक, झारखंड, इंडिया. *जर्नल ऑफ मेडिसिनल हर्ब्स एंड एथ्नोमेडिसिन*. https://doi.org/10.25081/JMHE.2020.V6.6204